प्रस्तावित खाद्य सुरक्षा कानून पर कुछ विचार

माधुरी

(जागृत आदिवासी दलित संगठन)

खाद्य असुरक्षा या भूख का प्रमुख कारण है कृषि क्षेत्र के लगातार शोषण से उत्पन्न मौजूदा गहरा संकट। इस शोषण के चलते हालात ऐसे हैं कि जहां देश की 66 प्रतिशत आबादी सीधे कृषि पर निर्भर है, वहीं देश की कुल कमाई में इस आबादी का हिस्सा केवल 17 प्रतिशत है। दूसरी तरफ निजी कंपनियों का हिस्सा एक प्रतिशत से भी कम होने के बावजूद वह देश की 33 प्रतिशत कमाई पर अपना दावा करता है और नौकरी पेशा लोग 55 प्रतिशत कमाई पर काबिज़ हैं।

गत 20 सालों में 'उदारीकरण' के चलते यह शोषण और तेज़ हुआ है और हाल ही में घोषित 'दूसरी हरित क्रांति' के नाम पर अब ज़्यादा आक्रामक रूप से होने लगा है। इसके अलावा, उद्योगों के लिए जल, जंगल, ज़मीन ज़्यादा तेज़ी से छीनी जा रही है।

असली खाद्य सुरक्षा तभी मिल सकती है जब न केवल शोषण और विस्थापन की नीतियां, बल्कि भारत की राजनैतिक अर्थव्यवस्था ही बदली जाए। इसके लिए निरंतर संघर्ष करना होगा। मगर फिलहाल प्रस्तावित खाद्य सुरक्षा कानून को इतना सशक्त बनाना होगा कि यह भूख से निपटने में कुछ असरदार हो, न कि केवल मौजूदा सरकारी योजनाओं में मामूली फेरबदल कर इसे ऊंट के मुंह में जीरा बना दिया जाए।

भूख के कारण निम्नलिखित हैं:

1. आज़ादी के बाद से ही यह मान लिया गया कि विकास तो औद्योगीकरण से ही होगा, इसलिए कृषि और गांव के संसाधन उलीच कर शहरों और उद्योगों को सम्पन्न बनाया गया। आर्थिक नीतियां ऐसी बनाई गईं जिनमें खेती को 'अकुशल श्रम' माना गया और खेती के श्रम के मूल्य को कम आंका गया। खेती और गांव के अन्य उत्पादों के भाव हमेशा कम रखे गए जबकि आद्यौगिक उत्पादन और नौकरशाही के भाव बढ़ाए गए। सरकारों द्वारा शहरी क्षेत्र, उद्योगों और नौकरशाहों को तरह-तरह की सब्सिडी भी दी गई, जिससे वे तो तेज़ी से समृद्ध हुए और किसान, ग्रामीण मज़दूर और गांव गरीब होते गए।

2. 'हरित क्रांति' की रूपरेखा पश्चिमी देशों की कम्पनियों द्वारा बनाई गई और उनकी सरकारों द्वारा दुनिया के गरीब देशों पर थोपी गई। 'हरित क्रांति' के अंतर्गत 'उन्नत बीज' ऐसे तैयार किए गए जो कम्पनियों द्वारा निर्मित खाद और दवा पर ही निर्भर रहें, जिससे खाद, दवा और सिंचाई के लगातार बढ़ते खर्चों से किसान पिसने लगे।

मध्यप्रदेश सहित 5 राज्यों में गेहूं उत्पादन पर किए गए एक अध्ययन में सामने आया कि 1970 से 1981 की अवधि में प्रति हैक्टर औसतन लागत 561 रुपए थी, जो 1981 से 1990 की अवधि में बढ़कर 1503 रुपए हुई और 2004-05 में 7673 रुपए तक पहुंच गई (यानी 10 गुना से ज़्यादा वृद्धि हुई)। 1970-81 से 2004-05 के बीच खाद पर खर्च 7.5 गुना, बीज पर 7.8 गुना, सिंचाई पर 15 गुना और कीटनाशक पर 300 गुना बढ़ा। इस दौरान फसलों के भाव में बहुत मामूली-सी वृद्धि हुई।

'हरित क्रांति' की नीतियों के चलते रणनीति के तौर पर वह पारम्परिक खेती लगभग खत्म की गई जिसमें कम पानी, खाद और दवा लगती है। खेती बाज़ार द्वारा नियंत्रित और बाज़ार के लिए होने लगी। किसान कर्ज़ में फंसता गया (पिछले कुछ सालों में ही देश में लगभग 2 लाख किसानों ने आत्महत्याएं की हैं)।

रासायनिक खाद व कीटनाशक से धरती बंजर हुई। 'उन्नत बीजों' की प्यास बुझाते-बुझाते धरती का पानी सूख गया। पौष्टिक और आसानी से उगने वाले 'मोटे अनाज', दलहन और तिलहन की निरंतर उपेक्षा की गई और इनका उत्पादन लगातार घटता जा रहा है। मशीनीकरण से लाखों ग्रामीण मज़दूर बेरोज़गार हुए हैं।

3. 'प्रथम हरित क्रांति' के दुष्परिणामों को नज़रअन्दाज़

करते हुए अब 'दूसरी हरित क्रांति' का हमला शुरू हो गया है। इसमें ठेका खेती, कम्पनियों द्वारा सीधी खेती व उद्योगों के लिए खेती (चिप्स के लिए आलू, केचप के लिए टमाटर, केक-बिस्कुट के लिए ड्यूरम गेहूं, फूलों की खेती आदि) शामिल हैं। अब डीज़ल के लिए रतनजोत ही नहीं बल्कि गन्ना, मक्का और अन्य अनाज का भी उपयोग किया जा रहा है। एक आकलन के मुताबिक खाद्यान्न की मौजूदा मंहगाई का 30 प्रतिशत श्रेय बायो-डीज़ल को जाता है और इसके कारण लगभग 29 करोड़ लोगों का रोज़गार खतरे में है। कुल मिलाकर, कृषि को पूरी तरह कम्पनियों के कब्ज़े में सौंपने की योजना है। इसके लिए कम्पनियों को सरकार से पूरी मदद और कई प्रकार की सब्सिडियां दी जा रही हैं।

'उदारीकरण' की 'खुली आयात-निर्यात नीतियों' के चलते हमारी खाद्य सुरक्षा कंपनियों द्वारा संचालित अन्तर्राष्ट्रीय बाज़ार पर निर्भर होती जा रही है। पिछले सालों में व्यापक भुखमरी के बावजूद सरकारी गोदामों में जमा गेहूं-चावल, बीपीएल से भी कम दरों पर विदेशों में बेचा गया है। सरकार ने 2007 में हमारे देश के किसानों से गेहूं खरीदकर (850 रुपए प्रति क्विंटल) उसे राशन में देने की बजाय विदेशों से दुगने भाव (1600 रुपए प्रति क्विंटल) में घटिया लाल गेहूं खरीदा। समर्थन मूल्य जानबूझकर कम रखा गया ताकि आई.टी.सी. और कारगिल जैसी कम्पनियां (1100 रुपए प्रति क्विंटल में) गेहूं खरीद सकें। और तो और, फसल के बाज़ार में आने से पहले ही यह तय कर लिया गया था कि विदेशी कम्पनियों द्वारा गेहूं आयात किया जाएगा, यह खबर अमरीका में फैलाई गई थी ताकि कम्पनियां अपना भाव बढ़ाकर रखें।

इसका एक और उदाहरण 2005-06 में उत्तर प्रदेश में देखने को मिलता है जहां गेहूं की सरकारी खरीद रोकी गई ताकि विदेशी कंपनियां गेहूं खरीद सकें। इस साल सरकारी खरीद न्यूनतम से भी कम रही। देश में पर्याप्त तिलहन उत्पादन के बावजूद खुले आयात के चलते हमें आयातित तेल पर निर्भर किया गया है। अभी लगभग 40 प्रतिशत खाद्य तेल का आयात किया जाता है। तिलहन उत्पादकों का इससे भारी नुकसान हुआ है। जो पॉमोलिन तेल मलेशिया से हमारे यहां खाद्य तेल के रूप में आयातित किया जाता रहा है उसका एक बड़ा हिस्सा अब मलेशिया द्वारा डीज़ल के उत्पादन में लगाया जा रहा है। ऐसी स्थिति में हम क्या करें?

खाद्यान्न का व्यवसाय करने वाली चन्द विशाल बहुराष्ट्रीय कम्पनियां विश्व खाद्यान्न के अधिकांश हिस्से पर कब्ज़ा जमाए हैं। वे ही बीज, खाद, कीटनाशकों व खरपतवारनाशकों की उत्पादक हैं। वे ही उत्पादित फसल को खरीदती-बेचती हैं। वे किसी भी देश के खाद्यान्न के मूल्य और उपलब्धता को अपने लाभ के लिए कम-ज़्यादा करने की क्षमता रखती हैं। विश्व के अनाज व्यापार का 90 प्रतिशत हिस्सा मात्र 3 कम्पनियों (कारगिल, एडीएम और बंग) के कब्ज़े में है। इसके अलावा ड्यूपोन्ट और मोन्सेन्टो बीज नियंत्रित करते हैं, जबकि कीटनाशकों के 85 प्रतिशत व्यापार पर 6 कम्पनियां (सिनजेन्टा, बेयर, मोनसेन्टो, बी.ए.एस.एफ., डाऊ और ड्यूपोन्ट) काबिज़ हैं। इन कम्पनियों को बल देने के लिए अमीर देशों की सरकारें विश्व व्यापार संगठन, व्यापार संधियों, विकास के लिए कर्ज़, तकनीकी सलाह और सैनिक हमले जैसे हथकण्डे अपनाने को तैयार हैं। जैसे 'दूसरी हरित क्रांति' की रूपरेखा बनाने वाली संस्था *इंडो यूएस नॉलेज इनिशियेटिव* जैसी तकनीकी सलाहकार संस्था के बोर्ड में मोनसेन्टो और कारगिल के प्रतिनिधि हैं।

ऐसी स्थिति में हमारी खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए हमें ऐसे उपाय करने होंगे जो हमारे खाद्यान्न को इन कम्पनियों के शिंकजे से बचाएं।

4. खाद्यान्न उत्पादन में उपयोग की जा रही ज़मीन और पानी को छीनकर उद्योगों को देने से खाद्यान्न सुरक्षा कैसे सुनिश्चित होगी? लाखों आदिवासियों को पालने वाले जंगल खदान और फैक्ट्रियों के लिए नष्ट किए जा रहे हैं। इस पर रोक लगनी चाहिए।

प्रस्तावित कानून

उपरोक्त स्थिति में प्रस्तावित खाद्य सुरक्षा कानून में निम्न बिन्दुओं को अवश्य शामिल किया जाना चाहिएः

- खाद्यान्न उत्पादन की ज़मीनें गैर-खाद्यान्न उपयोग में न ली जाएं। जल स्रोतों पर पहला हक कृषि का हो एवं यह पानी किसी भी स्थिति में औद्योगिक या व्यापारिक गतिविधियों के लिए न छीना जाए। वनों में खदान, फैक्ट्री या अन्य कोई भी विनाशकारी काम न किए जाएं।
- देश से कुपोषण का खात्मा होने तक खाद्यान्न का निर्यात न हो।
- आपातकालीन स्थिति के अलावा देश की खाद्यान्न ज़रूरतें देश के उत्पादन से ही पूरी की जाएं।
- सरकार गेहूं, चावल के अलावा ज्वार, बाजरा, रागी, मक्का जैसे मोटे अनाज, दलहन व तिलहन की खरीद भी न्यूनतम समर्थन मूल्य पर करे। समर्थन मूल्य इतना होना चाहिए कि किसान को अपने श्रम सहित पूरी लागत मिले तथा खेत मज़दूर को भी न्यूनतम मज़दूरी मिल सके, उन्हें न्यूनतम सुरक्षा मिले और वे इज़्ज़त की ज़िन्दगी जी सकें। कृषि में न्यूनतम मज़दूरी की दरों की समीक्षा होनी चाहिए।
- जिनेटिक रूप से परिवर्तित (जिरूप) बीज पर प्रतिबन्ध हो। जिरूप व कम्पनी द्वारा निर्मित पैकेज्ड फूड किसी भी सरकारी खाद्य योजना में इस्तेमाल न किया जाए। सरकारी खरीद, संग्रहण व वितरण व्यवस्था में निजी कम्पनियों की कोई भागीदारी नहीं होगी।
- इस कानून द्वारा एक नई सशक्त और व्यापक सार्वजनिक वितरण प्रणाली का निर्माण होना चाहिए। एक ऐसी प्रणाली जो हमारी खेती को संबल और दिशा देते हुए हमारी 80 प्रतिशत खाद्य असुरक्षा-ग्रस्त आबादी को खाद्य सुरक्षा दे और साथ ही खाद्यान्न उत्पादक और ग्राहक, दोनों को कम्पनियों के शिकंजे से बचाए। सार्वजनिक वितरण प्रणाली निम्न बिन्दुओं पर आधारित हो:

धन की कमी?

एक विस्तृत व पुख्ता राशन व्यवस्था या स्वास्थ्य, शिक्षा, रोज़गार जैसी मांगों के संदर्भ में बताया जाता है कि सरकार के पास पर्याप्त धन नहीं है। वास्तविकता यह है कि सरकार के पास धन तो है, इच्छाशक्ति नहीं है। यह इच्छाशक्ति अब खुलकर कंपनियों के हित में नज़र आती है। विकास की आसन्न ज़रूरतों के बावजूद भारत में टैक्स की दरें अनेक विकसित राष्ट्रों से कम है। यह हमारे सकल घरेलू उत्पाद का 18.5 प्रतिशत है जबकि अमरीका जैसे अमीर हितैषी राष्ट्र में यह 25.4 प्रतिशत, स्वीडन में 50.7 प्रतिशत, डेनमार्क में 49.6 प्रतिशत एवं बेल्जियम में 45.6 प्रतिशत है। कर राजस्व वसूली में भी इस वर्ष कमी आई है।

सबसे चौंकाने वाली और घटिया बात यह है कि कंपनियों को छूट एवं सब्सिडी के ज़रिए, टैक्स के माध्यम से उगाही जा सकने वाली आधी से अधिक राशि का सरकार स्वतः परित्याग कर देती है। 2008-09 में केन्द्र सरकार द्वारा 4,18,095 करोड रुपए के टैक्स राजस्व की माफी दी गई जो कि कुल लागू टैक्स का करीब 69 प्रतिशत है। ऐसे ही 2007-08 में 48 प्रतिशत और 2006-07 में 50 प्रतिशत छूट दी गई थी। इस 4,18,095 करोड़ रुपए के मुकाबले इस साल नरेगा पर मात्र 39,000 करोड़ व राशन व्यवस्था पर 55,000 करोड़ रुपए का ही प्रावधान किया गया है। कंपनियों को दी गई सब्सिडी जनकल्याण योजनाओं के खर्च से लगभग 4 गुना है।

छूट के बाद जो टैक्स लगाए जाते हैं उनकी भी पूरी वसूली नहीं होती है। ना वसूली गई राशि 2005-06 में 90255.88 करोड़ थी जो 2006-07 में बढ़कर 99293.04 करोड़ हो गई। 5 अगस्त 2009 को संसद में बताया गया कि देश के 100 प्रमुख बकायदारों पर 1.41 लाख करोड़ रुपए कर के रूप में बकाया हैं। नवीनतम केन्द्रीय बजट में जहां सामाजिक क्षेत्र पर सकल घरेलू उत्पाद का मात्र 1.8 प्रतिशत व्यय प्रस्तावित है वहीं रक्षा पर व्यय 2.5 प्रतिशत है। इसके अतिरिक्त छठे वेतन आयोग एवं विदेशी कर्ज़ के भुगतान की वजह से संसाधनों पर अत्यधिक भार पड़ रहा है। ऐसे में व्यापक खाद्यान्न सुरक्षा योजनाओं पर किए जाने वाले खर्च की मांग में ज़रा भी संकोच की ज़रूरत नहीं है।

☐ बीपीएल तथा एपीएल के विभाजन की बजाय सभी को राशन की दुकानों पर खाद्यान्न मिलना चाहिए।

☐ लक्षित वितरण प्रणाली उदारीकरण के संदर्भ में लागू की गई थी, ताकि समर्थन मूल्य पर खरीद व सार्वजनिक वितरण प्रणाली दोनों ही खत्म हो जाएं और किसान और गरीब उपभोक्ता दोनों ही कम्पनियों द्वारा नियंत्रित बाज़ार के अधीन हो जाएं। कई प्रकार की हेरा-फेरी से गरीबी रेखा से नीचे परिवारों की संख्या जबरन घटाई जा रही है, वह भी इसी घोटाले का हिस्सा है।

☐ राशन व्यवस्था के सर्वव्यापीकरण में सम्पन्न वर्ग (पूंजीपति, तयशुदा राशि से ज़्यादा मासिक वेतन पाने वाले व नौकरीपेशा) को इससे बाहर किया जा सकता है।

☐ भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद के विशेषज्ञों के अनुसार प्रति व्यक्ति प्रति दिन 2800 कैलारी की आवश्यकता है और इस मापदंड के अनुसार छोटे से छोटे परिवार को 50-65 किलोग्राम अनाज प्रति माह मिलना ही चाहिए। साथ ही 6-8 किलोग्राम दाल व 3-5 किलोग्राम तेल भी मिलना चाहिए। इससे कम वितरण करने की कोई तुक नहीं है।

☐ वितरण के लिए व्यक्ति या एकल परिवार को इकाई माना जाना चाहिए।

☐ राशन व्यवस्था में ज्वार, बाजरा, मक्का, रागी जैसे मोटे अनाज, दाल व खाद्य तेलों का भी वितरण होना चाहिए इसी से कुपोषण पर रोक लग सकती है। इन खाद्यान्नों की सरकारी खरीद व वितरण से इनकी खेती को प्रोत्साहन और बल मिलेगा। हरित क्रांति में इन फसलों की हुई उपेक्षा को सुधारने का यह एक मौका है।

☐ सरकारी खरीद व वितरण की विकेन्द्रीकृत व्यवस्था होना चाहिए। सरकारी गेहूं की अधिकांश खरीद पंजाब-हरियाणा से व चावल की खरीदी आंध्र प्रदेश से हो रही है। बाकी प्रांतों के गेहूं-चावल और पूरे देश के मोटे अनाज, दलहन, तिलहन आदि को प्रोत्साहन व संबल देने के लिए विकेंद्रित खरीद व वितरण व्यवस्था होना चाहिए। इस व्यवस्था से संग्रहण व परिवहन के खर्च में काफी बचत हो सकती है और इस बचत से समर्थन मूल्य को बढ़ाया जा सकता है।

☐ राशन कार्ड महिलाओं के नाम से बनाए जाएं।

☐ राशन व्यवस्था में भ्रष्टाचार के लिए सख्त से सख्त सज़ा होनी चाहिए।

एक और मुद्दा है, तंत्र को दुरुस्त करने का। पिछले कुछ वर्षों में जो भी सामाजिक कानून पारित हुए हैं उनमें जवाबदेही और दंड का समुचित प्रावधान न होने के कारण उनके प्रावधानों का उल्लंघन आम हो गया है। अतएव नए खाद्य सुरक्षा कानून के अंतर्गत भ्रष्टाचार, जमाखोरी, खाद्यान्न को अन्य किसी उपयोग में लाना आदि पर प्रतिबंध लगाने के लिए सख्त कानून बनाए जाने चाहिए और ऐसे अपराधों को गैर जमानती घोषित कर गंभीर अपराधों की श्रेणी में रखा जाना चाहिए। इसी के साथ आवश्यक वस्तु अधिनियम को नए खाद्य सुरक्षा अधिनियम में समाहित कर उसका हिस्सा बनाना चाहिए। ***(स्रोत फीचर्स)***

वर्ग पहेली 61 का हल

के	ल्वि	न		जा	न	व	र	
शि				र		म		बु
का	यां	त	र	ण		न	के	ल
		र			को			बु
सु	चा	ल	क		ख	प	रै	ल
क			ला			हि		
रा	के	श		कि	मि	या	ग	र
त		त		सा				स
	प	क	वा	न		य	मु	ना